जैनेन्द्र और सुभद्रा कुमारी चौहान की रचनाओं में स्त्री-विमर्श

शीतल कुमारी*

जैनेन्द्र कुमार और सुभद्रा कुमारी चौहान दोनों समकालीन रचनाकार हैं, दोनों व्यापक संवेदना के रचनाकार हैं। दोनों विशेष प्रतिभा के धनी हैं। दोनों ने अपने-अपने ढंग से 'स्त्री मुक्ति' के प्रश्नों को उठाया है। बस फर्क इतना ही है कि एक पुरुष रचनाकार है और एक स्त्री रचनाकार है। जहाँ जैनेन्द्र कुमार की रचनाओं में 'स्त्री मुक्ति' के प्रश्नों को उठाकर भी स्त्री के प्रति सहानुभूति का आभास होता है, वहीं दूसरी ओर सुभद्रा कुमारी की रचनाओं में 'स्त्री मुक्ति' का प्रश्न स्वानुभूति का प्रश्न है। एक ने अनुभव को उकेरा है तो दूसरे ने भोगे हुए यथार्थ को। यहीं से सहानुभूति और स्वानुभूति का प्रश्न हमारे सामने खड़ा हो जाता है।

फिर भी जैनेन्द्र कुमार हिन्दी कथा-साहित्य की दुनिया में पहले लेखक हैं, जिन्होंने स्त्री-पुरुष संबंध को आधुनिकता की दृष्टि से देखने और पेश करने का काम किया है। जिस समय कथा-संसार में प्रेमचंद जैसा प्रभावी और युगप्रवर्तक कथाकार मौजूद हो, उस समय एक अलग राह की प्रवर्तन करते हुए स्वयं को स्थापित करना एक असाधारण काम है। जैनेन्द्र ने यह कारनामा किया है, इसलिए आज भी स्मरण में है। जैनेन्द्र ने स्त्री पात्रों के माध्यम से स्त्री की पीड़ा सामने लाकर इसके माध्यम से समाज को समझाने की कोशिश की है। ध्यान देने वाली बात यह है कि जैनेन्द्र ने यह काम आज से लगभग अस्सी वर्ष पहले किया है, तब न तो देश आजाद था, और न ही समाज में स्त्री अधिकारों के प्रति जागरूकता और सजगता ही थी।

अब सोचने वाली बात तो यह है कि जब उस समय 'स्त्री अधिकारों' के प्रति जागरूकता नहीं थी तो सुभद्रा कुमारी में इतनी जागरूकता कहाँ से आयी? सुभद्रा इतनी साहस कहाँ से लायी कि वह प्रथम सत्याग्राही नारी के रूप में नागपुर में बंदी बनाई जाती हैं। सन् 1923 तथा 1942 में दो बार ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ बगावत करते हुए जेल भी जाती हैं। जिन्दगी अपने शर्तों पर जीती हैं। जीवन के सभी फैसले स्वयं लेती हैं। सुभद्रा कुमारी की तरह ही इनकी स्त्री-पात्र बहुत साहसी है।

अब अगर प्रश्न पर बातचीत की जाए तो 'तुलनात्मक अध्ययन' की दृष्टि से यहाँ जैनेन्द्र कुमार की बहुचर्चित कहानी 'एक रात' की तुलना सुभद्रा कुमारी की कहानी 'वेश्या की लड़की' के साथ किया जा सकता है। दोनों कहानियां अलग-अलग परिवेश में लिखी गई हैं, पर स्त्री-पीड़ा, स्त्री-संघर्ष की दृष्टि से एक जैसी लगती हैं। 'एक रात' कहानी में नायिका प्रेम और कर्तव्य के द्वन्द्व में फँसी रहती हैं और अंत तक निकल नहीं पाती है। एक रात कहानी की नायिका अपने पति से कहती है कि ''आज मुझे पता चला है कि अपना सब कुछ मैं तुम पर नहीं वार चुकी। भीतर ही भीतर कुछ बच गया था जो आज देखती हूँ, तुम्हारे चरणों में अर्पण नहीं कर सकी हूँ। मैं तुम्हें धोखा देती रही। तुमसे पाती सबकुछ रही, देने में चोरी करती रही। मैं पतिव्रता नहीं हूँ। आज ही मुझे मालूम हुआ है कि मैं पूरी तरह समर्पिता नहीं हूँ।'' इस प्रकार वह दो टूक अपने पति से कह देती है कि ''मेरे दिल में एक कोना अब भी बचा हुआ था, जहाँ तुम नहीं थे, कोई और था।'' सुदर्शना स्वेच्छा से अपने पति को सारी सच्चाई बता देती है, ठीक 'त्यागपत्र' की 'मृणाल' की तरह जबकि उसका पति इन सब बातों से बेपरवाह नशे में चूर है।

'एक रात' कहानी कुछ इस प्रकार है कि कहानी की नायिका सुदर्शना 'जयराज' नामक युवा नेता से प्रेम करती है। किंतु उसका विवाह जयराज से नहीं हो पाता। जैसे की जैनेन्द्र की सभी रचनाओं में देखा जा सकता है। सुदर्शना अपने पति के साथ

* शोधार्च्छात्रा, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय।

जीवन काट रही होती है। तभी उसका पूर्व प्रेमी उसकी पसंद जयराज से उसका सामना होता है और उसके अंदर दबा प्रेम जागृत होने लगता है। सुदर्शना को अपराध-बोध होने लगता है और इसी अपराध-बोध में वह अपने पति को सच्चाई बता देती है। उसके बाद जो होता है वह बहुत सहज नहीं जान पड़ता क्योंकि उसका पति उसे मारता-पीटता नहीं है। वह तो कहता है- ''मैं नहीं समझता आत्मा, धर्म, सदाचरण। मैं समझता हूँ प्रेम, सुदर्शना मैं तुम्हें प्रेम करता हूँ।'' पति में एकाएक परिवर्तन होना प्रेम की स्वीकृति करना पति के प्रति सहानुभूति दिखाना, यही जैनेन्द्र, गाँधीवादी जैनेन्द्र का सत्याग्रह है। पति का कहना है- ''सुदर्शना छूटने और छोड़ने की बात करोगी तो मेरा दिल अपने बचाव में कुछ तो करेगा ही।.... तुमपर पतिव्रता का कोई दबाव नहीं, कोई बोझ नहीं।'' तब सुदर्शना कहती है, ''स्वामी प्रतिदान में चूकना मुझसे हुआ है, तुम्हारा प्रेम वह है, जो मुझे रोकेगा नहीं। मेरे प्रेम के पास जाने के लिए।'' सुदर्शना पति और प्रेम के द्वंद्व में फँसी रहती है और फिर शब्दहीन संदेशहीन सुदर्शना चली जा रही है और अपने पूर्व प्रेमी जयराज के पास स्टेशन की ओर। जिसे मन ही मन प्यार करती है। उसके साथ स्टेशन तक जाती है और उसके गोद में सर रखकर सो जाती है। यहाँ भी जैनेन्द्र ने सुदर्शना का प्रेमी के प्रति समर्पण ही दिखाया है। इतना ही नहीं जिस समय सुदर्शना, जयराज की गोद में माथा रखकर सो रही है और जयराज जगकर ट्रेन की प्रतीक्षा कर रहा है उस समय जैनेन्द्र की इस कहानी का अंश देखिए-

सुदर्शना ने थोड़ी देर बाद धीमे से पूछा, 'क्या बजा होगा? साढ़े बारह तो हो गया होगा।'

'बहुत सर्दी है।'

हाँ बहुत सर्दी है।

कुछ देर हो गयी दोनों चुप रहे। तदन्तर सुदर्शना धीमे स्वर में बोली 'तुम लेट जाओ, मैं कहती हूँ।'

मानों सुदर्शना के भीतर की माता ने यह कहा। (जैनेन्द्र की सर्वश्रेष्ट कहानियाँ, पृष्ठ-91)

यहाँ जैनेन्द्र ने मातृत्व की खोज कर ली है। सतीत्व और मातृत्व के बिना जैनेन्द्र की स्त्रियाँ पूर्ण हो ही नहीं पाती हैं। यहाँ सुदर्शना प्रेमिका है और उसके लिए ऐसा कहना स्वभाविक है, फिर भी जैनेन्द्र की यह कोशिश है। उसके प्रेम को भी मातृत्व की कसौटी पर फिट करना। अब मजे की बात यह है कि सुदर्शना पति का घर छोड़कर प्रेमी के पास आती है और प्रेमी से उसे खास सहारा नहीं मिलता और अपने द्वंद्व में फंसी होने के कारण वह फिर पति के घर लौटने लगती है।

अब अगर 'वेश्या की लड़की' कहानी पर बात की जाए, उसकी इस कहानी की नायिका 'एक रात' कहानी से ज्यादा मुखर है। जिससे प्रेम करती है, उससे ही विवाह करती है। उसके जीवन में समझौता कहीं नहीं है। जीवन खुद के शर्तों पर जीती है, उसे अपने जीवन को खत्म करते समय नहीं लगता।

'वेश्या की लड़की' की नायिका 'छाया' नगर की प्रसिद्ध नर्तकी की इकलौती कन्या है। उसकी माँ मंदिर की प्रधान नर्तकी होती है, मंदिर की प्रधान पुजारी की कृपा है उस पर। जिसके कारण सुख-सुविधा की कोई कमी नहीं है। नगर में उसकी विशाल कोठी थी। मंदिर के अलावा वह कहीं बुलाने पर भी नृत्य करने नहीं जाती।

कहानी का नायक प्रमोद नगर के प्रतिष्ठित और कुलीन ब्राह्मण परिवार का लड़का था। दोनों सहपाठी हैं और प्रेम करते हैं एकदूसरे से। और दोनों ने प्रेमविवाह कर लिया 'कोर्ट मैरिज'। अब ध्यान देने योग्य बात यह है कि जहाँ जैनेन्द्र की स्त्री पात्र खुल कर प्रेम की अभिव्यक्ति भी नहीं कर पाती है और आदर्श सतीत्व और मातृत्व को ढोते हुए ससुराल चली जाती है। वहीं सुभद्रा की स्त्री पात्र 'छाया' जिसे कुलीन घर के लड़कियों के साथ बात तक करने का अधिकार नहीं है। परिवारवालों का

विरोध, तिरस्कार और प्रतारणा न तो प्रमोद को पथ से विचलित कर सका न छाया को। छाया अपनी माँ का घर छोड़कर, सारी सुख-सुविधा को छोड़कर वह प्रमोद के साथ सूखी रोटी खाकर तृप्त है। लेखिका कहती- ''छाया सुख की छाया में बड़ी हुई थी। अपमान, अनादर तिरस्कार के ज्वालामय संसार से परिचित न थी। अब पद-पद पर उसे प्रमोद से प्रेम के स्थान पर तिरस्कार से भरा हुआ अपमान मिलता था। प्रमोद के इस परिवर्तन के बाद भी छाया ने समझ लिया था कि प्रमोद के हृदय में उसने एक ऐसा स्थान बना लिया है जिस तक किसी और की पहुंच नहीं है। उसे इसी में संतोष है।'' (पृष्ठ संख्या 26, सुभद्रा कुमारी की चुनी हुई कहानियाँ)। छाया जो करती है, खुद करती है। उसे अपनी माँ के साथ बदनामी की जिन्दगी पसंद नहीं। प्रमोद के लाख कहने पर कि तुम अपनी माँ के घर लौट जाओ पर छाया नहीं लौटती है। वह कहती हैं- ''मेरी नसों में सीता और सावित्री का महान आदर्श है मेरे साथ.....। उनसे कहना कि मेरी माँ मर चुकी है अगर होती तो मेरे तरह पवित्र जीवन व्यतीत करती।'' अब जरा ध्यान दीजिए - सुदर्शना भी बार-बार पतिव्रता समर्पिता शब्द का प्रयोग करती है। ऐसा जान पड़ता है कि 'पतिव्रता' शब्द दोनों ही कहानियों की नायिकाओं पर हावी है। पर ध्यान देने योग्य बात तो यह है कि जहाँ सुदर्शना शादी के कई वर्षों बाद भी पतिव्रता नहीं हो जाती है 'एक रात' प्रेमी के साथ रहती है। उसके सामने समर्पण करने के बाद भी वह उसके साथ नहीं रहती। वहाँ से लौटती है फिर पति के घर ही जहाँ से मुहमोड़ कर चली गयी थी। वहीं दूसरी ओर छाया सीता और सावित्री का आदर्श लेकर जीवन जी रही है। पर 'छाया' को आज की स्त्री की तरह पति का किसी दूसरी औरत के साथ हेलमेल बर्दास्त नहीं। वह जिस पति के लिए सीता बनकर सारा दुःख, अपमान झेलती है पर प्रतिशोध की आग ऐसी है कि वह माँफी माँगने का भी मौका नहीं देती। जिन्दगी जीती है तो अपने शर्तों पर चाहे जितना उसे दुःख सहना पड़े, वह हारती नहीं है। मौत को गले लगाना उसे मंजूर है पर पीछे मुड़ कर जाना नहीं। प्रमोद घर लौटकर देखता है- ''छाया अपने जीवन की अंतिम सांसें ले रही थी। उसकी आंखे कदाचित् एक बार प्रमोद को देख लेने की प्रतीक्षा में खुली थीं। प्रमोद के आते ही एक हिचकी के साथ उसकी आँखे सदा के लिए बंद हो गई। प्रमोद पागलों की तरह छाया की लाश पर गिर पड़े।'' सीता की तरह छाया भी मौत को ऐसे गले लगाती है कि प्रमोद एक बार माफी भी नहीं माँग पाता। यह आधुनिक नारी का प्रतिशोध है। वह अपने प्रेमी, पति को बाँटना नहीं चाहती। उसे मर्द के पैरों की जूती बनना पसंद नहीं। वह स्वतंत्र रूप से प्रेम करती भी है और चाहती भी है। जीवन अपने बनाए शर्तों पर जीती है। चाहे उसे मृत्यु को ही गले क्यों न लगाना पड़े।

अब निष्कर्ष रूप से हम यह कह सकते हैं कि जैनेन्द्र 'स्त्री-पीड़ा' को काफी 'बोल्ड' तरीके से प्रस्तुत करने के बाद भी उसका गाँधीवादी समाधान सुझाते हैं। जैनेन्द्र 'स्त्री-मुक्ति' की औषधि गांधीवादी औषधालय में खोजते नजर आते हैं। जिन्हें आज का स्त्री-विमर्श स्वीकार नहीं करने की स्थिति में है। जैनेन्द्र की स्त्री 'राधा' की तरह कृशकाय होकर कृष्ण की बाट जोहती नजर आती है। यही कारण है कि सुदर्शना न पति की होकर रह पाती है न प्रेमी की। वहीं सुभद्रा की स्त्री-पात्रों पर गांधी दर्शन का प्रभाव रहते हुए वह समझौते की जिन्दगी जीना नहीं चाहती। उसकी स्थिति जिन्दगी और मौत के आरपार चलती है। सुभद्रा की स्त्री पात्र 'छाया' स्त्री-विमर्श के मानदंडों पर खरी उतरती है। जीवन के सभी फैसले उसके अपने हैं। उसके शरीर पर, उसके जीवन पर उसका अधिकार है। उसके प्रेमी या पति का नहीं। वह जरूरत पर सीता और सावित्री की तरह पतिव्रता का व्रत निभाती है वहीं अपमान, तिस्कार और धोखा पाने पर प्रतिशोध भी करती है, और प्रतिशोध भी कैसा? जो सोचने-समझने के लिए भी समय न दे। वह बदला लेती है अपने पति से उसे अकेला तड़पता छोड़कर मौत को गले लगाना आज से अस्सी वर्ष पूर्व बहुत साहस का काम है। सहानुभूति और स्वानुभूति का यहीं अन्तर है। मीरा की पंक्ति का यहाँ याद आना स्वभाविक ही प्रतीत होता है- ''घायल की गति घायल ही जाने और न जाने कोय।''

****